राजनीतिक दलों के आय-व्यय विवरण की विधिवत् जांच वर्तमान समय में भ्रष्ट राजनीति और काले धन के बीच एक गठबन्धन स्थापित हो गया है। इसे तोड़ा जाना नितान्त आवश्यक है। अतः राजनीतिक दलों के लिए आय-व्यय का समस्त विवरण रखा जाना अनिवार्य होना चाहिए और प्रत्येक राजनीतिक दल के लिए प्रतिवर्ष मुख्य चुनाव आयुक्त द्वारा निश्चित किये गये लेखा परीक्षक (Auditors) द्वारा जांचशुदा हिसाब प्रकाशित करना अनिवार्य होना चाहिए, जिसमें आय के स्रोत और व्यय के मद पूरे विवरण सहित बताये जायें। राजनीतिक दल द्वारा इस सम्बन्ध में बरती गयी किसी भी अनियमितता या लापरवाही पर चुनाव आयोग द्वारा कड़ा दृष्टिकोण अपनाया जाना चाहिए और विशेष स्थिति में आयोग को अधिकार होना चाहिए कि वह सम्बन्धित राजनीतिक दल की मान्यता समाप्त कर सके । राजनीतिक दलों को प्राप्त होने वाले गुप्त अनुदानों और विदेशी सहायता पर रोक लगायी जा सकेगी।

(iii) चुनाव प्रचार की अवधि में कमी करना—वर्तमान समय में नाम वापस लेने की तिथि और चुनाव की तिथि में कम-से-कम 20 दिन का अन्तर होना आवश्यक है। अब यह अवधि 10 दिन कर दी जानी चाहिए, इससे भी चुनाव खर्च में कमी होगी।

(iv) संसद और राज्य विधानसभाओं के लिए एक साथ चुनाव की व्यवस्था— 1967 के चतुर्थ आम चुनाव तक भारत में लोकसभा और राज्य विधानसभाओं के चुनाव एक साथ होते थे, लेकिन 1971 ई में यह स्थिति समाप्त हो गयी और अब तक भी पुन यह स्थिति नहीं बन पायी है। यदि लोकसभा और विधानसभ के चुनाव एक साथ हों तो राज्य द्वारा चुनाव व्यवस्था में किया जाने वाला खर्च और विविध राजनीतिक दलों के उम्मीदवार द्वारा किये जाने वाले खर्च दोनों में ही बहुत कमी हो जायेगी। इसके अतिरिक्त, लोकसभा और राज्य विधानसभाओं के चुनाव अलग-अलग होने पर सदैव ही चुनाव का वातावरणबना रहता है और यह स्थिति राज्य व्यवस्था के लिए अत्यधिक अहितकर है।

1971 ई में लोकसभा चुनाव से राज्य विधानसभा चुनावों को अलग करते समय यह तर्क दिया गया था कि लोकसभा चुनाव राष्ट्रीय प्रश्नों पर और विधानसभा चुनाव स्थानीय तथा राज्यस्तरीय प्रश्नों के आधार पर लड़े जाते हैं। इस तर्क में सत्यता है, लेकिन बहुत अधिक महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि भारतीय मतदाता पर्याप्त जागरूक हो गया है। मतदाता की जागरूकता का प्रमाण यह है कि वे आठवीं लोकसभा के चुनाव में कर्नाटक राज्य में 28 में से 24 स्थान इंका को देता है, लेकिन दो महीने बाद होने वाले राज्य विधानसभा चुनावों में उसी दल को एक-तिहाई स्थान भी नहीं (224 में से केवल 66) देता। महाराष्ट्र के 1999 लोकसभा एवं विधानसभा चुनाव परिणाम भी यह इंगित करते हैं कि राज्य के मतदाता ने लोकसभा के लिए भाजपा-शिवसेना गठबन्धन को पसन्द किया जबकि विधानसभा के लिए उसको अस्वीकार कर दिया। इस परिप्रेक्ष्य में मतदाताओं से सहज ही यह आशा की जा सकती है कि

लोकसभा और राज्य विधानसभाओं के चुनाव एक साथ होने पर भी वे अपने दोनों मतों को अलग-अलग इकाई समझते हुए उनके सम्बन्ध में अलग-अलग दृष्टिकोण से विवेकपूर्ण विचार कर निर्णय कर लेंगे।

(v) चुनाव अवधि में सार्वजनिक संस्थाओं को अनुदान देने पर रोक–चुनाव की अवधि (विधानसभा या लोकसभा भंग करने के दिन से लेकर चुनाव के दिन तक) में दलों या उम्मीदवारों द्वारा सार्वजनिक संस्थाओं को अनुदान देने पर रोक लगा दी जानी चाहिए।

(vi) चुनाव खर्च या भार पूर्णतया या आंशिक रूप से राज्य द्वारा वहन करना - इस सम्बन्ध में सबसे प्रमुख सुझाव यह दिया जा रहा है कि चुनाव खर्च का भार पूर्णतया या आंशिक रूप से है राज्य के द्वारा वहन किया जाना चाहिए। कांग्रेस दल द्वारा नियुक्त की गयी संसदीय समिति ने भी सुझाव दिया है कि राजनीतिक दलों और उम्मीदवारों द्वारा किये गये वैध चुनाव खर्ची का बोझ धीरे-धीरे राज्य द्वारा अपने ऊपर ले लिया जाना चाहिए।चुनाव खर्च या भार पूर्णतया या आंशिक रूप से राज्य द्वारा वहन करना – इस सम्बन्ध में सबसे प्रमुख सुझाव यह दिया जा रहा है कि चुनाव खर्च का भार पूर्णतया या आंशिक रूप से राज्य के द्वारा वहन किया जाना चाहिए। कांग्रेस दल द्वारा नियुक्त की गयी संसदीय समिति ने भी सुझाव दिया है कि राजनीतिक दलों और उम्मीदवारों द्वारा किये गये वैध चुनाव खर्ची का बोझ धीरे-धीरे राज्य द्वारा अपने ऊपर ले लिया जाना चाहिए।

वर्तमान समय में विश्व के कुछ देशों में राज्य द्वारा चुनाव खर्च का भार वहन किये जाने की व्यवस्था है। स्वीडन में सभी राष्ट्रीय राजनीतिक दलों का उनकी पिछली सफलता के आधार पर सरकार से सीधे चुनाव का समस्त खर्च दिया जाता है। दूसरी विधि मिश्रित चुनाव व्यय की है जिसे पश्चिमी जर्मनी में अपनाया गया है। इस विधि के अनुसार सरकार चुनाव व्यय के एक हिस्से की जिम्मेदारी अपने ऊपर लेती है तो दूसरे हिस्से की जिम्मेदारी उम्मीदवार स्वयं वहन करता है। ब्रिटेन और 9 अन्य देशों में भी राजकोष से राजनीतिक सहायता दिये जाने की व्यवस्था है।

भारतीय परिस्थितियों में राज्य द्वारा खर्च का समस्त भार अपने ऊपर लेना अव्यावहारिक हो सकता है, लेकिन रजनीकोठारी के सुझाव को स्वीकार किया जा सकता है। शासन के द्वारा दलों के शामियाने, दरी, जीप, पोस्टर छपवाने के लिए निर्धारित धनराशि आदि मूल सुविधाएं दी जानी चाहिए, जिससे चुनाव समान शक्तियों के बीच एक खेल बन न सके और चुनावों में धन की भूमिका को कम किया जा सके।" शासन के द्वारा सभी दलों के लिए चुनाव सभाओं की व्यवस्था करने और मतदाताओं में परची (Slips)

बांटने का कार्य और उन्हें चुनाव स्थल तक पहुंचाने का कार्य भी अपने हाथ में लिया जा सकता है। इस सम्बन्ध में यह व्यवस्था की जा सकती है कि मतदाताओं के एक निश्चित प्रतिशत मत प्राप्त करने या अन्य कुछ शर्तों को पूरा करने वाले राजनीतिक दलों को ही शासन से यह सहायता प्राप्त होगी।

इस सम्बन्ध में 1977 में एक प्रशंसनीय कार्य हुआ है। जून 1977 के विधानसभा चुनावों के पूर्व 4 राष्ट्रीय दलों और 8 राज्य-स्तरीय दलों को समान आधार पर 'आकाशवाणी से प्रसारण की सुविधा प्रदान की गयी। यह निश्चित रूप से सही दिशा में एक प्रयास है और 1980 में सत्ता परिवर्तन के बाद भी इसे जारी रखा गया, किन्तु नवम्बर 1989 के चुनावों में कांग्रेस (इ) की हठधर्मिता और आयोग की उदासीनता के कारण इसे क्रियान्वित नहीं किया जा सका।

चुनाव में धन की बढ़ती हुई शक्ति की समस्या के दो पहलू हैं। प्रथम, चुनाव में प्रयोग किये जाने वाले धन की मात्रा में निरन्तर वृद्धि और द्वितीय, चुनावों में काले धन का प्रयोग। इनमें दूसरी स्थिति को नियन्त्रित करने का एक प्रयत्न मार्च 1985 में किया गया है।

अब संयुक्त पूंजी कम्पनियों द्वारा राजनीतिक दलों को दिये जाने वाले दान पर प्रतिबन्ध हटा दिया गया है। यह प्रतिबन्ध 1969 ई. में लगाया गया था और इस प्रतिबन्ध का परिणाम यह हुआ कि राजनीतिक दल काला धन प्राप्त करने पर बाध्य हो गये। मार्च 1985 में की गयी इस व्यवस्था से राजनीति में काले धन की भूमिका पूर्णतया समाप्त नहीं हो जायेगी, लेकिन इसे स्वच्छ राजनीति की दिशा में एक प्रयास अवश्य ही कहाजा सकता है। एक प्रमुख समाचार-पत्र के सम्पादकीय में इसे काले धन के उदय की जड़ों और समाज में भ्रष्टाचार पर प्रहार करने वाला कदम बताया गया है।

अन्य कुछ उपायों को अपनाकर चुनाव में धन के प्रभाव को कुछ कम किया जा सकता है, लेकिन वस्तुतः यह समस्या कानूनी नहीं वरन् व्यावहारिक राजनीति से सम्बन्धित है और चुनावों में धन की भूमिका को कम करने का सबसे कारगर उपाय मतदाताओं द्वारा राजनीतिक जागरूकता की स्थिति को प्राप्त करना है।

दूरदर्शी राजनीतिज्ञ राजाजी ने छठे दशक में एक पुस्तिका लिखी थी 'Rescue Democracy from Money Power | आज इस बात की प्रासंगिकता और महत्व निश्चित रूप से बहुत अधिक बढ़ गया है।

लोकतन्त्र को धनिकतन्त्र में परिणत होने से रोकने के लोए चुनाव और समस्त राजनीति में धन की शक्ति को कम किया जाना बहुत आवश्यक है।